बच्चों के सवाल

केवलानंद कांडपाल*

शिक्षण के पारंपरिक ढाँचे में अध्यापक प्रश्न पूछने का सत्तात्मक अधिकार रखते हैं, कभी-कभी बच्चों के सवालों को नज़रअंदाज़ भी कर दिया जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि बच्चा ज्ञान का स्रोत अध्यापक को मानने लगता है, तथ्यों, सूचनाओं, घटनाओं को रटने का तरीका अपना लेता है। ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया से स्वयं को जोड़ नहीं पाता है, इस प्रकार सीखने की ज़िम्मेदारी भी नहीं ले पाता है। अध्यापक के प्रश्नों का उत्तर देना और उसमें भी सही उत्तर देने का दबाव एवं जल्दबाज़ी बच्चों में भय, तनाव एवं दुश्चिंता पैदा करती है। बच्चे सवाल क्यों न करें? बच्चे सवालों के जवाब खोजने की प्रक्रिया से जुड़ें तभी तो ज्ञान-निर्माण की प्रक्रिया में सहभागी बन सकेंगे। इस लेख में विद्यालय की वास्तविक परिस्थितियों में इस प्रक्रिया से प्राप्त अनुभवों को साझा करने का प्रयास किया गया है।

बच्चों के बारे में हमारी रूढ़ अवधारणा यह है कि बच्चे सीखना नहीं चाहते, चीज़ों को जानना-समझना नहीं चाहते। मोटे तौर पर हम कह देते हैं बच्चे पढ़ना-लिखना ही नहीं चाहते। कुछ विशेष वर्ग के विद्यालयों (विशेषकर सरकारी विद्यालयों) पर यह आक्षेप लगा दिया जाता है कि इन विद्यालयों के बच्चे पढ़ना नहीं चाहते। सतही तौर पर लगाए गए इन आक्षेपों के गंभीर सामाजिक निहितार्थ हैं। इन विद्यालयों में प्राय: ऐसे वर्ग एवं सामाजिक समूहों के बच्चे आते हैं जिनके पास न तो कोई विकल्प है और न जिनकी कोई आवाज़ है। इस तरह का दृष्टिकोण किसी विशेष सामाजिक हैसियत एवं वर्ग से आने वाले बच्चों एवं विशेषकर बालिकाओं (आर्थिक सामर्थ्य होने पर बालकों को बेहतर समझे जाने वाले तथाकथित पब्लिक स्कूलों में भेजने का प्रयास रहता है जबकि बालिकाओं को सरकारी विद्यालयों में ही भेजा जाता है।) के शैक्षणिक विमर्श के मुद्दों की उपेक्षा करता है और इनको हाशिये पर धकेलने का कार्य करता है।

* *प्राध्यापक,* जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान बागेश्वर, उत्तराखंड 263642

खैर, डायट में अकादमिक अभिकर्मी के सेवा दायित्वों के अंतर्गत मेरी चिन्ता एवं चिन्तन का विषय एक तरह से जनपद के सरकारी, प्रारंभिक सरकारी विद्यालय ही हैं और यह मेरी पेशेवर सीमा भी है। इस क्रम में विद्यालय अनुश्रवण एवं अकादमिक अनुसमर्थन हेतु इन विद्यालयों में जाना होता रहता है। (यद्यपि मैं हमेशा से ही इसे बच्चों से बातचीत, उनके सामाजिक एवं शैक्षिक संदर्भों को समझने एवं इस परिप्रेक्ष्य में अध्यापकों से बातचीत के अवसर के रूप में देखता हूँ और इसी दिशा में प्रयासरत् रहता हूँ।) पहले बच्चों, अध्यापकों एवं विद्यालयों के परिप्रेक्ष्य एवं उनकी शैक्षणिक ज़रूरतों को समझने का शऊर तो प्राप्त हो, अनुश्रवण एवं अकादमिक अनुसमर्थन तो इसके बाद की प्रक्रियाएँ हैं।

सो, इसी मंतव्य से जनपद बागेश्वर के दुर्गम क्षेत्र में अवस्थित विद्यालय राजकीय प्राथमिक विद्यालय सिमकुना जाने का अवसर निकाला। कुल 51 बच्चे इस विद्यालय में नामांकित हैं। इस दिन कुल 46 बच्चे विद्यालय में उपस्थित थे। बच्चों से बातचीत के क्रम में ज्ञात हुआ कि अधिकांश बच्चे विषम सामाजिक परिस्थितियों एवं निर्धन परिवारों से ताल्लुक रखते हैं परंतु बच्चों की सक्रियता, सीखने की ललक बहुत ही उत्साहवर्द्धक थी। यह आगे स्पष्ट होगा कि मैं किस आधार पर यह सब कहने का साहस कर पा रहा हूँ।

विद्यालय की अध्यापिकाओं के साथ बातचीत के बाद सभी कक्षाओं से एक साथ बातचीत करने का मंतव्य था। मेरे मन में योजना थी कि पहले सभी बच्चों के साथ सामान्य बातचीत करके उनके परिप्रेक्ष्य को जानने-समझने की कोशिश की जाए बाद में कक्षा 3, 4, 5 के बच्चों से कुछ गहन बातचीत करके इनके शैक्षणिक परिप्रेक्ष्य को जानने का प्रयास किया जाए। अत: विद्यालय की अध्यापिकाओं से अनुमति लेकर इसी प्रकार की व्यवस्था बना ली गई

बातचीत की शुरुआत में परिचय हुआ। बच्चों ने मेरे बारे में बहुत से सवाल पूछे, बच्चों के सवालों से मुझे इस बात का स्पष्ट भान हो गया था, बच्चे पहले मुझे जाँच-टटोल लेना चाहते थे कि वे मुझ पर किस सीमा तक विश्वास कर सकते हैं? मेरी शिक्षा, बचपन, स्कूल, गाँव, काम आदि के बारे में बहुत सारे सवाल बच्चों ने किए तब जाकर शायद उन्होंने मुझे बराबरी के स्तर पर मानकर बातचीत लायक माना हो। प्राय: बच्चों से परिचय के क्रम में हम इस प्रकार के सवालों से बचना चाहते हैं। मुझे बातचीत के क्रम में उनका परिचय होता जा रहा था, कुछ अलग से पूछने-जानने की कम ही ज़रूरत पड़ रही थी। कुछ

बच्चे अभी भी संकोच के दायरे से बाहर आने में झिझक रहे थे। इनको बातचीत में कैसे शामिल किया जाए? इस क्षण मेरे मन में यही उथल-पुथल चल रही थी। इसी बीच एक मुखर बच्चे ने मुझसे सवाल किया कि मुझे क्या पसंद है? और क्या नापसंद है? बस मुझे बातचीत को आगे बढ़ाने का सूत्र मिल गया। मैंने अपनी पसंद नापसंद को ईमानदारी से बताया और अपनी बचपन की पसंद नापसंद को भी साझा कर लिया। मेरा अनुमान था कि इस दिशा में बात को आगे बढ़ाने पर बच्चों के परिप्रेक्ष्य को समझने में मदद मिल सकती है।

अत: तय किया कि प्रत्येक बच्चा अपनी पसंद/नापसंद को साझा करेगा। इस उपक्रम से उन बच्चों को दोस्ती बातचीत के दंगल में लाने में मदद मिली जो अभी तक संकोच में सिमटे हुए थे।

अब बातचीत आगे बढ़ी कि मुझे क्या अच्छा लगता है? कब बुरा लगता है? इस क्रम में बहुत सारे संवेदनशील परिप्रेक्ष्य सामने आये। इनमें से कुछ चौंकाने वाले तथ्य/परिप्रेक्ष्य निम्न प्रकार से हैं–

- एक बच्चे ने बताया कि जब अध्यापिका/अध्यापक उसे बुद्धू कहते हैं, उसे बहुत बुरा लगता है। (विद्यालयों/कक्षाओं में बच्चों के नाम गढ़ना एवं विभेदीकरण (Discrimination and Labeling at School)।
- एक बालिका ने कहा कि उसे घर पर रोज़ झाड़ू लगाना पड़ता है, मेरा भाई कभी यह काम नहीं करता है। मुझे बहुत बुरा लगता है। (परिवार में जेंडर विभेद के प्रति बालिका की संवेदनशीलता (Discrimination at Home)।
- बालिकाओं का कहना था कि लड़के हमें कैरम नहीं खेलने देते हैं, कहते हैं कि लड़कियों के खेल खेलो। (विद्यालय में जेंडर विभेद के प्रति बालिकाओं का स्पष्ट नज़रिया (Discrimination at School)।
- एक बालिका ने बताया कि उसे बहुत बुरा लगता है जब उसे विद्यालय आने से मना किया जाता है और घर पर ही रोक दिया जाता है| इस बालिका के बारे में अन्य बच्चों ने बताया कि एक बार यह बच्ची घर पर रोके जाने के बावजूद घरवालों को बताए बगैर चुपचाप मध्यावकाश के बाद विद्यालय आ गयी थी। (बालिकाओं की शिक्षा को लेकर अभिभावकों में लापरवाही एवं बच्चे में विद्यालय के प्रति स्वाभाविक लगाव)।

इस प्रकार के कई मुद्दे सामने आए जिनकी हम घर पर या फिर विद्यालय में जाने या अनजाने उपेक्षा करते रहते हैं। इस प्रारंभिक बातचीत का मेरा मंतव्य भी यही था। सो बच्चों के नज़रिये के बारे में मुझे महत्वपूर्ण सुराग मिल रहे थे। इन मुद्दों पर बाद में अध्यापकों से बातचीत भी करनी थी, शिक्षणशास्त्रीय संदर्भों में इन मुद्दों की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। विद्यालय कक्षा-कक्ष स्तर पर इस बारे में क्या-क्या किया जा सकता है, अध्यापकों से विचार-विमर्श किया गया।

अब बच्चों के संज्ञानात्मक परिप्रेक्ष्य को जानना-समझना ज़रूरी था सो बच्चों के साथ मिलकर तय किया गया कि बातचीत के अगले क्रम में पहले आधा घंटा मैं बच्चों से सवाल करूँगा, बाद में बच्चे

एक घंटा या उससे भी अधिक सवाल कर सकते हैं और मुझे उनके सवालों के जवाब देने होंगे। और हाँ मैने यह पहले ही स्पष्ट कर दिया था कि कुछ ऐसे प्रश्न हो सकते हैं जिनका उत्तर मुझे न आता हो, ठीक उसी प्रकार जैसे कुछ प्रश्नों के उत्तर बच्चों को नहीं आते हैं। इससे एक महत्वपूर्ण संदर्भ सवालों के तुरंत उत्तर देने का कोई दवाब नहीं है। सवालों के जवाब ढूँढने के लिए छान-बीन, खोजबीन आगे भी जारी रह सकती है। बच्चों को यह ईमानदारी पसंद आयी। उनकी दृष्टि में अब बच्चों और मेरे बीच मामला बराबरी का था (कम से कम इस समय मुझे यह साफ़-साफ़ महसूस हो रहा था)।

अपनी बारी में मैंने बच्चों से अधिकांशत: स्मृति-आधारित प्रश्नों एवं कुछेक समझ-आधारित प्रश्नों के परिप्रेक्ष्य में बातचीत को आगे बढ़ाया। इस बार मुख्यत: कक्षा 3, 4 एवं 5 के बच्चों से बात करने का विचार था। विश्लेषण एवं तर्क-आधारित प्रश्नों को मैं जानबूझ कर प्रयोग में नहीं ला रहा था (कहीं न कहीं मेरी मान्यता थी कि विषम परिस्थितियों से आए इन बच्चों से विद्यालय का इतनी अपेक्षा करना न्यायसंगत नहीं होगा। अफ़सोस है कि मैं गलत साबित हुआ। बहुत बार हम बच्चों को कम करके आँकते हैं, यही भूल मैं भी कर रहा था)। खैर, मेरा आधे घंटे का समय पूरा हुआ। अब बच्चों की प्रश्न पूछने की बारी थी। एक घंटा नहीं बल्कि पूरे दो घंटा बीस मिनट तक लगातार बच्चों ने प्रश्न किये। इस बीच बच्चों ने कम से कम 47 प्रश्न किये। यह प्रश्न किताबी थे या नहीं, इसका अनुमान आप बच्चों के प्रश्नों की बानगी से कर सकते हैं-

- दीपक (कक्षा-5) अंग्रेज़ों ने हमें किस प्रकार गुलाम बनाया? पहले तो अंग्रेज़ व्यापार करने आये थे।
- प्रकाश (कक्षा-5) नैनीताल की खोज किसने की? नैनीताल को बसाने में पी. बैरन की उत्सुकता क्यों रही होगी ?
- दिव्या (कक्षा-5) नील एवं अमेजन दोनों नदियों में किस नदी को सबसे बड़ी नदी कहना चाहिए?
- विवेक (कक्षा-3) भारत का सबसे बड़ा सम्मान कौन-सा है? यह किसी व्यक्ति को कब दिया जाता है?
- दीपक (कक्षा-5) भारतीय झंडे का प्रारूप किसने तैयार किया? इससे पूर्व झंडा कैसा था? किसी देश के लिए झंडा क्यों ज़रूरी है? किसी देश के लिए झंडा किस प्रकार का होगा, इसे कौन तय करता है?
- अंकिता (कक्षा-3) उत्तराखंड के राज्यपाल किस राज्य के रहने वाले हैं?
- अमित (कक्षा-4) मछली की तो नाक नहीं होती है तो फिर वह साँस कैसे लेती है?
- राजेश (कक्षा-4) जलियाँवाला बाग कांड का हमारे देश की आज़ादी से क्या संबंध है?
- दीपक (कक्षा-5) महात्मा गाँधी तो अहिंसावादी थे, फिर उन्होंने 'करो या मरो' का नारा क्यों दिया?
- भावना (कक्षा-4) पेड़-पौधे हमारी तरह साँस लेते हैं फिर इनको काटना एक तरह से प्राणी को नष्ट करना नहीं है? (प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता)।

प्रश्न तो लगभग सभी बच्चों ने किये परंतु जिन प्रश्नों को मैं हमेशा याद रखना चाहूँगा, यह उनकी बानगी भर है। बच्चों के प्रश्न एकदम से उनकी पाठ्य पुस्तकों से भले ही न हों परन्तु इन प्रश्नों को बेतुके प्रश्नों की श्रेणी में तो किसी भी हिसाब से नहीं रखा जा सकता है। मेरी मोटी समझ में बच्चों के ये प्रश्न स्मृति एवं समझ के स्तर से उच्च स्तर की किसी श्रेणी में आते हैं। इससे एक अन्य महत्वपूर्ण समझ मज़बूत होती है कि बच्चे किसी भी तथ्य ज्ञान की सतही समझ से संतुष्ट न होकर उसमें गहरे उतरना चाहते हैं।

बच्चों के द्वारा एक के बाद दूसरा प्रश्न, मेरे उत्तर की स्पष्टता के लिए किए गए प्रश्नों ने मुझे दम लेने का भी मौका नहीं दिया परंतु उनको उत्तर एवं स्पष्टीकरण देने में मुझे बहुत आनंद आया। (सौभाग्यवश इतिहास एवं भूगोल मेरी रुचि का विषय होने के कारण मैं बच्चों को कुछ हद तक संतुष्ट कर सका, संभवत: बच्चों को भी मेरी रुचि का भान हो गया हो। इसे आत्मश्लाघा न समझा जाए।) यदि प्रश्न मेरे रुचि के क्षेत्र से नहीं भी होते या मेरी अवधारणात्मक समझ के दायरे से बाहर से भी होते तो यह मेरी प्रोफ़ेशनल जवाबदेही होती कि मैं पुन: पूरी तैयारी के साथ बाद की मुलाकातों में बच्चों के बीच जाकर संवाद करूँ। वैसे भी हमारे बीच मित्रता का इतना मज़बूत पुल बन गया था कि मैं किसी प्रश्न को तत्काल संबोधित न भी कर पाता तो बच्चे यह मानने को तैयार थे कि हमें हरेक सवालों का जवाब आना ज़रूरी भी नहीं है, इन प्रश्नों के बारे में आगे खोजबीन की जा सकती है। यह बात तो हमारी बातचीत के प्रारंभ में ही समझौते की शर्त जो थी। मूलभूत बात यह थी कि बच्चों को प्रश्न करने के अवसर दिए जाएँ।

हमारी लगभग ढ़ाई घंटे की बातचीत में बच्चे प्रश्न-प्रति-प्रश्न कर रहे थे और मैं उत्तर देने का प्रयास कर रहा था। यह तरीका बच्चों को बहुत पसंद आया। इसका प्रमाण भी बातचीत के बाद एक तरह से मुझे मिल ही गया। जब मैं बच्चों से विदा लेने लगा तो एक प्यारी सी बच्ची अंकिता ने कहा कि 'सर, सर आपसे बातचीत करके हम बच्चों को अच्छा लगा।

बच्चों से बातचीत, उनके प्रश्नों की गहराई, उनकी संलग्नता, प्रति प्रश्नों से अपनी समझ को स्पष्ट करने का तरीका आदि से यह अनुमान लगाना कठिन नहीं है कि बच्चे सीख रहे थे/सीखना चाह रहे थे, समझ रहे थे/समझना चाहते थे।

बच्चों के सवालों, प्रति-सवालों से एक बात तो बहुत साफ़ है कि बच्चे ज्ञान सृजन की प्रक्रिया के लिए हमेशा तत्पर रहते हैं। अध्यापक के रूप में हमें बस इतना करना है कि उनके सवालों को संबोधित

करें, इसी क्रम में बच्चे के विषयगत परिप्रेक्ष्य को समझें, उनके अधिगम स्तर (स्मृति, ज्ञान, समझ, विश्लेषण एवं मूल्यांकन स्तर) का पता लगाएँ, आकलन एवं मूल्यांकन करते चलें उसी के अनुरूप अपनी शिक्षण प्रक्रिया का नियोजन एवं समयोजन करें। यह सब साथ-साथ चलता रहता है।

मैं यह दावा तो नहीं कर सकता कि बच्चे मेरे उत्तरों से संतुष्ट हो गए हों, उन्होंने कुछ सीख भी लिया हो परंतु यह विश्वास है कि ये बच्चे मेरी बातों को हू-ब-हू नहीं मानेंगे, आगे जाँच-पड़ताल करेंगे। यह जाँच-पड़ताल इन्हें करनी भी चाहिए तभी तो ज्ञान सृजन की प्रक्रिया को आगे बढ़ाएँगे।

इन सभी मुद्दों पर विद्यालय की अध्यापिकाओं से विचार-विमर्श करके संतोष भाव लेकर लौटा। एक विचार की स्पष्टता के साथ लौटा कि अध्यापक ही हमेशा सवाल क्यों करें? बच्चे सवाल क्यों न करें? मूल बात है कि सवाल उठाये जाएँ बच्चों से सवालों के तुरंत उत्तर प्राप्त करने की हमारी अपेक्षा बच्चों को रटने की ओर धकेलती है। इसके विपरीत सवालों के हल मिल-जुलकर खोजने की लोकतांत्रिक प्रक्रिया बच्चों में सीखने के प्रति स्वाभाविक प्रेम विकसित करती है, यह सबसे महत्वपूर्ण बात है।

बच्चों के द्वारा किये जाने वाले सवालों के गंभीर शैक्षणिक निहितार्थ हो सकते हैं। बच्चों के सीखने एवं अध्यापकों द्वारा सिखाने की प्रक्रिया के महत्वपूर्ण सुराग इसमें छिपे हो सकते हैं। महान वैज्ञानिक 'अल्बर्ट आंइस्टीन' ने एक बार कहा था "महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रश्न पूछना जारी रहना चाहिए"। मैं बच्चों से बातचीत से रोमांचित हूँ कि बच्चे तो हमेशा जानने, समझने एवं सीखने के लिए तत्पर रहते हैं बशर्ते हम बच्चों को सवाल करने के अवसर तो दें।

संदर्भ

कपूर, अरुण. 2009. *बदलते विद्यालय तेजस्वी बच्चे*, हिंद पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, जे-40, जोरबाग लेन, नयी दिल्ली 110003.

डैनीसन जॉर्ज. 1997. *बच्चों का जीवन*, अनुवादक – पूर्वा याज्ञिक कुशवाहा, ग्रंथ शिल्पी (इंडिया) प्रा. लि.,बी.-7, सुभाष चौक, लक्ष्मीनगर, दिल्ली 110092.

नील, ए. एस. 2004. *समर हिल*, हिंदी अनुवाद – पूर्वा याज्ञिक कुशवाहा, एकलव्य, ई.-7/453 एच. आई. जी., अरेरा कालोनी, भोपाल 462016, म.प्र.

बधेका गिजू भाई. 1991. *दिवास्वप्न* , अनुवाद – काशिनाथ त्रिवेदी, पहला संस्करण नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, फेज़-।।, वसंत कुंज, नयी दिल्ली 110072.

भारत सरकार. 1993. *शिक्षा बिना बोझ के* (Learning Without Burden), शिक्षा विभाग, नयी दिल्ली।

मैथ्यूज़, गैरथ वी. 1996. '*बच्चों से बातचीत*', अनुवादक – सरला मोहन लाल, ग्रंथ शिल्पी (इंडिया) प्रा. लि.,बी.-7, सुभाष चौक, लक्ष्मीनगर, दिल्ली 110092.

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्. 2007. *मननशील शिक्षक*, प्रथम संस्करण, प्रकाशन प्रभाग, श्री अरविन्द मार्ग, नयी दिल्ली 110016.

_____. 2006. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा* – 2005, प्रथम संस्करण, प्रकाशन प्रभाग, श्री अरविन्द मार्ग, नयी दिल्ली 110016.

वारनर, सिल्विया एश्टन. 1996. *अध्यापक*, प्रथम हिंदी संस्करण, अनुवादक – पूर्वा याज्ञिक कुशवाहा, ग्रंथ शिल्पी (इंडिया) प्रा. लि.,बी.-7, सुभाष चौक, लक्ष्मीनगर, दिल्ली 110092.

होल्ट, जॉन. 1993. *बच्चे असफ़ल कैसे होते हैं,* हिंदी अनुवाद – पूर्वा याज्ञिक कुशवाहा, एकलव्य प्रकाशन, ई.-7/453 एच. आई. जी., अरेरा कालोनी, भोपाल 462016, म.प्र.

_____. 2006. *असफ़ल स्कूल*, हिंदी अनुवाद – अरविन्द गुप्ता,, एकलव्य प्रकाशन, ई.-7/453 एच. आई. जी., अरेरा कालोनी, भोपाल 462016, म.प्र.

Government of India *The Right of Children to Free and Compulsory Education Act 2009*, The Gazette of India, Ministry of Law and Justice.

Mukunda, Kamla V. 2009. *What Did You Ask At School Today* – A Handbook of Child Learning, First Published in India in 2009 by Collins An Imprint of Karper Collins Publisher India.

Sharma, Santosh,(Editor). 2014. *What is RTE ? Some Ways of Making Education Accessible*– A Handbook for Teacher, Publication Division, National Council of Educational Research and Training, Sri Aurobindo Marg. New Delhi 110016